Gyanvividha, Vol.-2; Issue-3 (July-Sept.) 2025 : PP-279-282

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-2.25
Vol.-2; Issue-3 (July-Sept.) 2025
Page No.- 279-282
©2025 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

सारिका यादव
शोधार्थी,
प्राच्यसंस्कृत विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ.

Corresponding Author :

सारिका यादव
शोधार्थी,
प्राच्यसंस्कृत विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ.

सेतुबन्ध महाकाव्य में दार्शनिक अध्ययन

दर्शन शब्द का अर्थ- दर्शन शब्द 'दृश्' (दर्शनार्थक) धातु से निष्पन्न हुआ है। इसकी व्युत्पत्ति दो प्रकार से की जाती है - 'दृश्यतेऽनेन इति दर्शनम्' (दृश् + ल्युट्) जिसके द्वारा देखा जाए या तत्वबोध सम्भव हो तथा 'दृश्यते' इति दर्शनम् जिसका तत्वबोध या साक्षात्कार हो जैसे आत्मदर्शन या तत्वबोध। भारतीय दर्शन के संदर्भ में प्रथम व्युत्पत्ति को सार्थक बताया गया है। उनके अनुसार भारतीय दर्शन अपनी वेद और उनकी अनेक शाखाओं के माध्यम से तत्वों का बोध या ज्ञान का साधन है। सामान्यतः भारतीय दर्शन के दो भेद हैं - आस्तिक एवं नास्तिक। आस्तिक दार्शनिक वेद एवं उनके प्रतिपाद्य ईश्वर में आस्था एवं विश्वास रखते हैं तथा नास्तिक दार्शनिक में हैं जो न वेद में विश्वास रखते हैं और न ही ईश्वर में विश्वास रखते हैं। आस्तिक दर्शन छः- न्याय, वैशेषिक सांख्य, योग, पूर्व मीमांसा एवं उत्तर मीमांसा अथवा वेदांत तथा नास्तिक दर्शन तीन हैं - बौद्ध, जैन एवं चार्वाक।

दर्शन संपूर्ण ब्रह्माण्ड एवं मानव जीवन के यथार्थ या वास्तविक स्वरुप सृष्टि -सृष्टा, आत्मा- परमात्मा, जीव-जगत, ज्ञान- अज्ञान, ज्ञान प्राप्त करने के साधन तथा मनुष्य द्वारा किए गए करने योग्य करणीय या न करने योग्य अकरणीय कार्यों का तार्किक विवेचन किया जाना है। अत: दर्शन जीवन का व्यापक व्यावहारिक एवं आवश्यक पक्ष है।

वैष्णवदर्शन- वैष्णवदर्शन के विकास में दो दृष्टियां बीज रुप में देखी जा सकती हैं एक का सम्बन्ध मीमांसा से है और दूसरी का सम्बन्ध वेदान्त से है। मीमांसको ने अपनी कर्मकाण्ड की नियमावली में ब्राह्मण, क्षत्रिय, एवं वैश्य वर्ण के लिए यज्ञादि का विधान किया था किन्तु चतुर्थ वर्ण को कर्मकाण्ड से बाहर रखा। वैष्णवदर्शन में चतुर्थ वर्ण के साथ ही मानव मात्र को भगवान की प्राप्ति एवं मोक्ष लाभ का अधिकार दे दिया अर्थात यहां जांति-पाति को बंधन से मुक्त कर दिया गया। भक्त के मात्र श्रद्धा के दो पुष्प ही भगवान को प्रसन्न करने के लिए पर्याप्त थे-

"पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्तया प्रयच्छति
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः"।।[1]

वेदान्त की प्रतिक्रिया वैष्णवदर्शन के उदय एवं विकास के मूल के वर्तमान में थी। इस प्रकार वैदिक युग में जो विष्णु शिव एवं शक्ति से संबंधित विचारधारा वर्तमान में थी, भक्तों की भागवत दृष्टि अर्थात भगवान के प्रति आस्था को आधार बनाकर वैष्णव, शैव एवं शाक्त संप्रदायों के रूप में विकसित हुई। विष्णु, शिव एवं शक्ति सम्बंन्धित वैदिक विचार ही वैष्णवागम, शैवागम एवं शाक्तागम के रूप में वैष्णवधर्म, शैवधर्म एवं शाक्तधर्म तथा विष्णु भक्ति, शिव भक्ति एवं शक्ति भक्ति के आधार के रूप में विकसित हुए।

वैष्णवसम्प्रदाय के प्रधान आचार्य रामानुज हैं, किन्तु रामानुज दर्शन को एक प्राचीन एवं स्थापित पृष्ठभूमि धरोहर के रूप में प्राप्त हुई थी। सर्वप्रथम ऋग्वेद में विष्णु का वर्णन सौर् देवता के रूप में किया गया है। विष्णु का निवास सम्पूर्ण आकाश बताया गया है।

वैष्णव धर्म भागवत धर्म का ही विकसित रूप है, विष्णु श्री भगवान के रूप में प्रतिष्ठित हुए हैं। विष्णु पुराण में विष्णु की प्रधानता है। हरिवंशपुराण में भी वैष्णवसम्प्रदाय का ही वर्णन प्राप्त होता है। श्रीमद्भागवत पुराण भी भागवतसम्प्रदाय पर ही बल देता है। श्रीमद्भागवत के अनुसार, भगवान श्री कृष्ण आराध्य हैं। तथा कलयुग में नारायण के उपासकों की संख्या अत्यधिक है। इसका विवरण श्रीमद्भागवत में पहले ही मिल चुका है।

उपनिषदों, पुराणों, श्रीमद्भगवतगीता एवं ब्रह्मसूत्र से रामानुज प्रभृति आचार्यों को वैष्णव सिद्धान्तों के प्रस्थापना में विशेष पृष्ठभूमि प्राप्त हुई थी। विशिष्टाद्वैतवाद सिद्धान्त को रामानुज ने ब्रह्मसूत्र से ढूंढा था, यही उनका विशेष योगदान था।

वैष्णव सम्प्रदाय- भगवान विष्णु और उनके स्वरूपों को आराध्य मानने वाला सम्प्रदाय है। इसके अंतर्गत मूल रुप से चार सम्प्रदाय आते हैं। मान्यता है कि इन सम्प्रदायों का प्रादुर्भाव पौराणिक काल में विभिन्न देवी देवताओं द्वारा वैष्णव महामंत्र की दीक्षा परंपरा से हुआ।

वैष्णव धर्म के चार सम्प्रदाय निम्न हैं-

1. श्री सम्प्रदाय- इस सम्प्रदाय की आद्य प्रवरतिका विष्णु की पत्नी महालक्ष्मी और इसके प्रमुख आचार्य विशिष्टताद्वैतवाद के प्रवर्तक रामानुजाचार्य हैं।

2. ब्रह्म सम्प्रदाय- इस सम्प्रदाय के बाद प्रवर्तक चतुरानन ब्रह्मादेव और (मध्व) द्वैतवाद के प्रवर्तक आचार्य माधवाचार्य हैं। यह सम्प्रदाय वर्तमान में माध्व सम्प्रदाय के नाम से जाना जाता है।

3. रुद्र सम्प्रदाय- इस सम्प्रदाय के आद्य प्रवर्तक देवादिदेव महादेव और प्रमुख आचार्य विष्णुस्वामी हैं। इनके नाम से ही इस सम्प्रदाय का नाम विष्णुस्वामी सम्प्रदाय हुआ तथा इसी परंपरा में आचार्य वल्लभाचार्य हुए जो वर्तमान में इनके नाम से ही इस सम्प्रदाय का नाम वल्लभ सम्प्रदाय के नाम से जाना जाता है।

4. कुमार सम्प्रदाय- इस सम्प्रदाय के आद्य प्रवर्तक सनत कुमार गण है तथा द्वैतवाद के प्रवर्तक आचार्य निम्बाकाचार्य हैं जो वर्तमान में इनके नाम से ही इस सम्प्रदाय का नाम निम्बार्क सम्प्रदाय के नाम से जाना जाता है।

रामानुजाचार्य ने भक्ति को अपने दर्शन में प्रतिष्ठित किया। रामानुजाचार्य ने अंत में यह निष्कर्ष निकाला कि बिना शरणागति के भगवान की शरण में आए बिना और भगवान की कृपा के बिना मोक्ष नहीं प्राप्त कर सकते हैं। ये प्रपत्ति ये शरणागति को रामानुजाचार्य ने अपने शिष्य रामानन्द को दिया और इसको लेकर रामानन्द ने उत्तर भारत में लाकर प्रचार किया कि विष्णु की भक्ति को प्राप्त करने के लिए विष्णु के अवतार है उन्होंने संसार में आकर अपनी लोक लीला की है उन्हीं के माध्यम से हम विष्णु को प्राप्त कर सकते हैं उन्होंने मार्ग दिखाया राम भक्ति का इस प्रकार रामभक्ति शाखा का उदय हुआ रामानन्द ने राम भक्ति को नौ खण्डों में प्रचारित कर दिया। कबीर ने लोकभाषा में भक्ति का प्रचार करने का निर्देश दिया। रामानन्द ने अपने गुरु रामानुजाचार्य की अपेक्षा अपना उपास्य बैकुंठ निवासी विष्णु को न मानकर लोकसंग्रहकर्ता अवतारी राम को माना। इस प्रकार

रामानन्द ने विष्णु के सभी रूपों अर्थात् अवतारों में लोक कल्याणकारी रूप को ही ग्रहण किया। उत्तर भारत में भक्ति धारा को प्रभावित करने में रामानन्द का प्रमुखता से उल्लेखनीय योगदान है।

ईश्वरीय सत्ता के प्रति आत्मनिष्ठता एवं आत्मचिंतन ही हमारी संस्कृति का एक दार्शनिक एवं व्यावहारिक पक्ष है जो हमें ईश्वर से तादात्म्य रूप से साक्षात्कार कराता है। सेतुबन्ध के नायक श्री राम जो विष्णु के अवतार हैं मानव के साथ-साथ ईश्वरीय सत्ता का भी प्रतिनिधित्व करते हैं जो दर्शन का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। श्री राम हमें स्वयं से अर्थात् आत्मनिष्ठता से जोड़ते हैं उनका व्यावहारिक पक्ष ही अनुकरणीय भूमिका निभाता है जो उनके द्वारा निभाए गए प्रेम, सत्य,कर्तव्यपराणयता आदि गुण हैं उनकी तरह बनने के लिए प्रेरित करते हैं अर्थात् आत्मसात करने की ओर अग्रसित करते हैं।

राम ही विष्णु, विष्णु ही राम,
हर कण-कण में समाये श्रीराम। - स्वरचित

सेतुबन्ध महाकाव्य में विष्णु के अवतारों हरि (त्रिविक्रम), नृसिंह, कृष्ण, वराह (आदिवराह, महावराह) जिनका प्रमुखता से विशद वर्णन किया गया है जो निम्न है-

विष्णु प्रसंग-

णमह अवडिअतुङ्गं अवसारिअवित्थअं
अणोणअगहिरम् ।
अप्पलहुअपरिसण्हं अणाअपरमत्थपाअडं
महुमहणम्॥[2]
[नमतावर्धिततुङ्गमप्रसारितविस्तृतमनवनतगभीर।
अप्रलघुकपरिश्लक्ष्णमज्ञात्तपरमार्थप्रकटं
मधुमथनम्॥]

हे सज्जनवृन्द! जो उन्नत एवं विस्तृत है, जो अगाध हैं, जिसकी थाह नहीं पाई जा सकती है, जो शांत है और जो परमार्थ रूप से अज्ञात होते हुए भी प्रकट हैं अर्थात् भगवान विष्णु सर्वत्र जगह हैं उस मधुमथन अर्थात् विष्णु को नमस्कार करो।

हरि (त्रिविक्रम) प्रसंग-

हरिणा बलिमहिहरणे समए जलएहि जळणिहोहि
जुअन्ते ।
जं ण चइअं भरेउं तं देहेण भुअणं भरेऊण ठिअम् ॥[3]
[हरिणा बलिमहीहरणे समये
जलदैर्जलनिधिभिर्युगान्ते ।
यन्न शकितं भर्तुं तद्देहेन भुवनं भृत्वा स्थितम् ॥]

हरि त्रिविक्रम अर्थात् भगवान विष्णु ने जब बलि के रूप में पृथ्वी का हरण करने के समय समुद्र को जल से भर दिया उस समय जिस पृथ्वी को समुद्र नहीं भर सके, उस पृथ्वी को अपने शरीर से ही व्याप्त किए स्थित हैं अर्थात् आपने अपने शरीर पर धारण कर लिया।

नृसिंह प्रसंग-

दणुएन्दरुहिरलग्गे जस्स फुरन्ते णहप्पहाविच्छट्टे ।
गुप्पन्ती विवलाआ गलिअ व्व थर्णसुए
महासुरलच्छी॥[4]
[दनुजेन्द्ररुधिरलग्ने यस्य स्फुरति नखप्रभाविच्छर्दे ।
व्याकुला विपलायिना गलित इव स्तनांशुके
महासुरलक्ष्मीः ॥]

हिरण्यकशिपु के हृदय को विदीर्ण करते समय नृसिंह रुप मधुमथन अर्थात् विष्णु के श्वेत नख में जब उस असुर का रक्त लगा और वह प्रकाशित हुआ तत्क्षण उस असुर की लक्ष्मी मानों नृसिंह के नख में उलझ जाने से स्तनांशुक अर्थात् स्तन के वस्त्र के खिसक जाने से लज्जित होकर मृत्यु को प्राप्त हुए स्वामी को व्याकुल होकर छोड़कर भाग गई।

कृष्ण प्रसंग-

पीणत्तणदुग्गेज्झं जस्स भुआन्तणिट्ठुरपरिग्गहिअम् ।
रिट्ठस्स विसमवलिअं कण्थं दुक्खेण जीविअं
बोलीणम् ॥[5]
[पीनत्वदुर्ग्राह्यं यस्य भुजान्तनिष्ठुरपरिगृहीतम् ।
अरिष्टस्य विषमवलितं कण्थं दुःखेन जीवितं
व्यतिक्रान्तम् ॥]

मोटापे के कारण वृषभरुपी अरिष्टासुर के कण्थ को दुग्र्राह्य समझकर जिस कृष्णरुपी मधुमथन अर्थात् विष्णु ने अपनी दोनों भुजाओं से निष्ठुरतापूर्वक (कठोरतापूर्वक) पड़कर इस प्रकार दबाकर मरोड़ा कि वह बुरी तरह से विषम एवं टेढ़ा होने के कारण कष्टपूर्वक प्राणों से विहीन हुआ उस अरिष्टासुर का वध करने वाले कृष्ण को नमस्कार करो।

वराह प्रसंग-

धरणिधरणे भुअ च्चिअ महणम्मि सुरासुरा खअम्मि

समुद्दा ।
हन्तव्वम्मि दहमुहे एण्हि तुम्हे त्थ महुमहस्स सहाआ॥[6]
[धरणिधरणे भुजा एव मथने सुरासुराः क्षये समुद्राः ।
हन्तव्ये दशमुखे इदानीं यूयं स्थ मधुमथनस्य सहायाः ॥]

वराह रूपी मधुमथन के पृथिवी को धारण करने के समय उनकी भुजायें, समुद्रमन्थन में सुर-असुर, प्रलय के समय समुद्र सहायक हुआ था तथा इस समय मधुमथन रूप राम के दशमुख अर्थात् रावण के वधरूपी कार्य में तुम्हीं लोग उनके एकमात्र सहायक रूप में हो।

आदिवराह प्रसंग-

णवरि अ कइहिअआइं धुअन्धआरविअडाइँ गमणुच्छाहो ।
एक्को बहुआइ समं गिरिसिहराइँ अरुणाअवो व्व विलग्गो ॥[7]
[अनन्तरं च कपिहृदयानि धुतान्धकारविकटानि गमनोत्साहः ।
एको बहूनि समं गिरिशिखराण्यरुणातप इव विलग्नः ।॥]

वानर वीरों ने पर्वतों को समुद्र में इस प्रकार डालना प्रारंभ कर दिया जिस प्रकार आदिवराह ने अपने हाथों से प्रलयकाल में उत्क्षेपण से खण्डित पृथिवी के टूटे हुए भूखंड को समुद्र में डालना प्रारंभ कर दिया।

महावराह प्रसंग-

तं च हिरण्णक्खस्स वि सुमिरामि महावराहदाढामिण्णम् ।
महिमण्डलं व तुलिअं उक्खअहिअअगिरिवन्धणं वच्छअडम् ॥[8]
[तच्च हिरण्याक्षस्यापि स्मरामि महावराहदंष्ट्राभिन्नम्।
महीमण्डलमिव तुलितमुत्खातहृदयगिरिबन्धनं वक्षस्तटम् ॥]

महावराह ने दांतों से विदारित अर्थात् फाड़े गए हृदयरूप ढीले पर्वतों के बन्धन को उखाड़ दिया तथा उत्तोलित अर्थात् उठाया हुआ सम्पूर्ण पृथिवी के समान हिरण्याक्ष के वक्षस्थल को भी स्मरण कर रहा हूं।

निष्कर्ष : अतः यह स्पष्ट होता है कि दर्शन केवल सैद्धांतिक विचारधारा न होकर जीवन, ब्रह्माण्ड एवं ईश्वरीय सत्ता से सम्बन्धित सत्यों का तार्किक तथा व्यावहारिक विश्लेषण है। भारतीय दर्शन आस्तिक और नास्तिक दोनों के माध्यम से सत्य की खोज करता है तथा मनुष्य को आत्मबोध और परमात्मा से तादात्म्य की ओर अग्रसर करता है। सेतुबन्ध महाकाव्य में श्रीराम और विष्णु के विविध अवतारों का वर्णन दर्शन के इसी व्यावहारिक एवं सांस्कृतिक पक्ष को प्रकट करता है। श्रीराम का चरित्र प्रेम, सत्य, सहिष्णुता, कर्तव्यपरायणता एवं आत्मनिष्ठा जैसे गुणों को आत्मसात करने की प्रेरणा देता है। इस प्रकार दर्शन न केवल ज्ञान का साधन है, बल्कि मानव जीवन को उच्चतम आदर्शों से तादात्मय कर उसे सार्थक एवं अनुकरणीय बनाने का माध्यम भी है जो उसे व्यावहारिक रुप से जोड़ता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :

1. स्वामी सनातन देव- श्रीमद्भागवतगीता, गीताप्रेस, गोरखपुर, 2008, 9/26.
2. सेतुबन्धमहाकाव्यम्-महाकविप्रवरसेन, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2012, प्रथम आश्वास, श्लोक सं.-1.
3. सेतुबन्धमहाकाव्यम्, नवम आश्वास, श्लोक सं.-5.
4. सेतुबन्धमहाकाव्यम्, प्रथम आश्वास, श्लोक सं.-2.
5. सेतुबन्धमहाकाव्यम्, प्रथम आश्वास, श्लोक सं.-3.
6. सेतुबन्धमहाकाव्यम्, तृतीय आश्वास, श्लोक सं.-3.
7. सेतुबन्धमहाकाव्यम्, चतुर्थ आश्वास, श्लोक सं.-2.
8. सेतुबन्धमहाकाव्यम्, चतुर्थ आश्वास, श्लोक सं.-22.

•